द्वितीय अध्याय

'चित्रलेखा' उपन्यास की कथावस्तु का अनुशीलन

कथावस्तु की पृष्ठभूमि, स्थान-घटना,

लेखक की भूमिका, पाप-पुण्य की समस्या।

द्वितीय अध्याय

चित्रलेखा उपन्यास की कथावस्तु का अनुशीलन

कथावस्तु उपन्यास का प्राण है, मूलाधार है। उपन्यास की मूल कहानी को कथावस्तु कहते हैं। कथावस्तु में एक ही कथा नहीं होती तो उसमें मुख्य कथा या आधिकारिक तथा प्रासंगिक या गौण कथाओं का भी समावेश होता है। उपन्यास की सफलता पूरी तरह से कथावस्तु के सुचारु संयोजन पर निर्भर रहती है। कथावस्तु समाज के अनेक प्रश्नों, समस्याओं, संघर्ष पर आधारित होती है। उपन्यासकार उसे अपनी अनुभूति की तीव्रता सूक्ष्म, दृष्टि तथा नूतन शैली से उसे मौलिक बनाता है। उपन्यास की कथावस्तु में सरलता, मौलिकता, विश्वसनीयता और रोचकता ये चार गुण होते हैं। कथावस्तु-विन्यास की दृष्टि से कथावस्तु के तीन भाग किए जा सकते हैं - 1. आरंभ, 2. मध्य या विकास और 3. अंत या समाप्ति।

भगवतीचरण वर्माजी का 'चित्रलेखा' उपन्यास समस्या प्रधान उपन्यास है। उनका यह उपन्यास 1934 में प्रकाशित हुआ है। इस उपन्यास से उन्हें बहुत प्रसिद्धि मिली। इस उपन्यास में बाईस परिच्छेद हैं। 177 पृष्ठों का यह उपन्यास है। इसमें पाप और पुण्य के बारे में समस्या का वर्णन किया है। 'चित्रलेखा' उपन्यास में अनेक पात्र और कथाएँ हैं, उनमें से बीजगुप्त, चित्रलेखा और कुमागिरि कथा अधिकारिक या प्रमुख है। श्वेतांक, यशोधरा, मृत्युंजय, विशालदेव, चंद्रगुप्त मौर्य और चाणक्य की कथाएँ प्रासंगिक हैं। इस प्रकार वर्माजी ने प्रासंगिक कथाओं का सहारा लेकर प्रमुख कथा को विकसित किया है।

'चित्रलेखा' का कथानक वर्माजी ने मौर्य कालीन राजा सम्राट चंद्रगुप्त के शासन काल के समय का चुना है। पाप और पुण्य की निश्चित परिभाषा नहीं है, वह केवल मनुष्य के दृष्टिकोण की विषमता का दूसरा नाम है - इस तथ्य को स्पष्ट करने का सफल प्रयत्न वर्माजी ने 'चित्रलेखा' के माध्यम से किया है, और वे अंत में सफल भी हो गए हैं।

वर्माजी ने 'चित्रलेखा' उपन्यास के प्रारंभ में परिस्थितियों का यथार्थ परिचय दिया है, फिर संघर्ष की ओर मुड़े हैं। मध्य भाग में यशोधरा की प्रासंगिक कथा द्वारा कथानक में विस्तार होता है। अंत में कथा का चरमोत्कर्ष दिखाया है; जो बहुत ही तीव्र है। इस उपन्यास में केवल एक वर्ष का संक्षिप्त कथानक है। उपन्यास का प्रारंभ अत्यंत नाटकीय है। पाप-पुण्य की समीक्षा से जुड़े अनेक वे महत्वपूर्ण प्रश्न भी हैं जो इस उपन्यास में बार-बार उठाए गए हैं। विवाह, प्रेम, धर्म, ईश्वर, व्यक्ति, परिस्थिति आदि के संदर्भों को लेखक ने जगह-जगह ज्वलंत प्रश्नों के रूप में सामने रखा है।

'चित्रलेखा' उपन्यास की शुरूआत ही समस्या से होती है। जैसे श्वेतांक ने पूछा - 'और पाप?' इस प्रश्न के द्वारा कथा शुरू होती है। महाप्रभु रत्नांबर के उत्तर से कुशल लेखक ने प्रारंभ में ही उपन्यास की मूल समस्या की ओर संकेत करते हुए लिखा है - 'हाँ पाप की परिभाषा करने की मैंने भी कई बार चेष्टा की है, पर सदा असफल रहा हूँ। पाप क्या है, और उसका निवास कहाँ है, यह एक बड़ी कठिन समस्या है; जिसको आज तक नहीं सुलझा सका हूँ। अविकल परिश्रम करने के बाद, अनुभव के सागर में उतराने के बाद भी जिस समस्या को नहीं हल कर सका हूँ, उसे किस प्रकार तुमको समझा दूँ?' [1] रत्नांबर रुक कर श्वेतांक से फिर कहते हैं - 'पर श्वेतांक, यदि तुम पाप जानना ही चाहते हो, तो तुम्हें संसार ढूंढना पड़ेगा। इसके लिए यदि तैयार हो, तो संभव है, पाप का पता लगा सको।' महाप्रभु के इस वाक्य से लेखक स्पष्ट करना चाहते हैं कि पाप की कोई परिभाषा नहीं दी जा सकती। और जो बात अध्ययन से नहीं जानी जा सकती है, उसे केवल अनुभव द्वारा ही जाना जा सकता है। महाप्रभु रत्नांबर के दो शिष्य हैं, श्वेतांक और विशालदेव। श्वेतांक क्षत्रिय तथा विशालदेव

ब्राह्मण-पुत्र है। महाप्रभु रत्नांबर पाप-पुण्य के बारे में जानकारी प्राप्त करने के लिए श्वेतांक को भोगी बीजगुप्त के पास और विशालदेव को योगी कुमारगिरि के पास भेजते हैं। उनका आदेश है कि इन दोनों को उनके जीवन-स्रोत के साथ बहना होगा। दोनों शिष्यों ने भी गुरु की आज्ञा स्वीकार की। जाने से पहले रत्नांबर ने दोनों को चेतावनी दी - 'पर एक बात याद रखना, जो बात अध्ययन से नहीं जानी जा सकती है, उसको अनुभव से जानने का प्रयत्न करने के लिए ही मैं तुम दोनों को संसार में भेज रहा हूँ। पर इस अनुभव में तुम स्वयं ही न बह जाओ, इसका ध्यान रखना पड़ेगा। संसार की लहरों की वास्तविक गति में तुम दोनों बहोगे। उस समय यह ध्यान रखना पड़ेगा कि कहीं डूब न जाओ।' [2] इस प्रकार महाप्रभु रत्नांबर ने पाप क्या होता है, प्रत्यक्ष अनुभव लेकर इसका पता लगाने के लिए विशालदेव को योगी कुमारगिरि के आश्रम में और श्वोतांक को भोगी सामंत बीजगुप्त के विलास-भवन में भेज दिया।

श्वेतांक बीजगुप्त के यहाँ आता है। बीजगुप्त के साथ पाटलिपुत्र की नर्तकी चित्रलेखा भी रहती है। वह अनुपम सुंदरी है। सुंदरता के साथ-साथ उसका कंठ भी कोमल है। इसी कारण पाटलिपुत्र का जनसमुदाय चित्रलेखा का दीवाना है। उसके इशारे पर चलता है। उसके सौंदर्य के कारण अनेक शक्तिशाली सरदार और लक्षाधीश नवयुवक उसके प्रणय के आकांक्षी थे। लेकिन सभी उसे पाने में असमर्थ रहे। एक दिन बीजगुप्त उसका नृत्य देखने आता है, उसी समय चित्रलेखा की नजर उसपर पड़ती है, तो वह उसे देखती ही रहती है। और उसके सौंदर्य से मोहित होकर बीजगुप्त भी उसको देखता रहा। चित्रलेखा संभल गई। नृत्य समाप्त होता है। बीजगुप्त चित्रलेखा को पुनः देखने की इच्छा प्रकट करता है। इस बात पर चित्रलेखा उत्तर देती है - 'नहीं, मैं व्यक्ति से नहीं मिलती। मैं केवल समुदाय के सामने आती हूँ, व्यक्ति का मेरे जीवन से कोई संबंध नहीं।' [3] बीजगुप्त बहुत समझाना चाहता है मगर वह मानती नहीं है, तो वह तीर की भाँति शब्द चलाता है - 'व्यक्तित्व जीवन में प्रधान है और व्यक्ति से ही समुदाय बनता है। जब व्यक्ति वर्जित है तो उस व्यक्ति को समुदाय का भाग बनना अपना ही अपमान करना है।' [4]

इसप्रकार बीजगुप्त के आदर्शवादी विचार सुनकर चित्रलेखा इस निष्कर्ष पर पहुँचती है कि केवल एक ही व्यक्ति उसके जीवन में आ सकता है, और वह व्यक्ति बीजगुप्त है। उस दिन से उन दोनों की मुलाकातें और प्रेम बढ़ने लगा। चित्रलेखा राजनर्तकी अवश्य थी, पर वेश्या नहीं थी। मध्यरात्री का समय था चित्रलेखा और बीजगुप्त दोनों आलिंगन में बद्ध थे। तभी श्वेतांक वहाँ बीजगुप्त का गुरुभाई और सेवक बनकर अपने गुरु के साथ प्रवेश करता है। रत्नांबर यहाँ आने का प्रयोजन बीजगुप्त को बताते हैं। वे बताते हैं - 'श्वेतांक पाप क्या है यह जानना चाहता है। पाप ब्रह्मचारी की कुटी में नहीं बल्कि संसार के भोग-विलास में ही पाप का पता लग सकता है अतः वह श्वेतांक को सेवक के रूप में स्वीकार करे।' इतना कहकर रत्नांबर चले जाते हैं। बीजगुप्त चित्रलेखा का श्वेतांक से परिचय कराता है - 'अच्छा तो सुनो। इनका नाम चित्रलेखा है, और यह पाटलिपुत्र की सर्व सुंदरी नर्तकी होते हुए भी मेरी पत्नी के बराबर है। इसीलिए यह तुम्हारी स्वामिनी भी हुई।' [5]

महाप्रभु रत्नांबर का दूसरा शिष्य विशालदेव योगी कुमारगिरि के पास गया था। कुमारगिरि योगी था। उसने इस संसार का त्याग किया था। कुमारगिरि वह काल्पनिक लोक या संसार को प्राप्त करने की आकांक्षा में इस संसार से विरक्त था। सारी इच्छाएँ उसके वश में थी। उसने अपनी वासनाओं पर विजय पाई थी। उसका कहना था कि वासना के कारण ही मनुष्य पाप करता है। कुमारगिरि आचार्य रत्नांबर के आग्रह के कारण उसे दीक्षा देने के लिए तैयार होते हैं। वह विशालदेव से कहते हैं - 'तुम जानना चाहते हो कि पाप क्या है। पर पाप क्या है, यह अधिकतर अनुभव से जाना जा सकता है, और मेरे साथ रहकर तुम्हें पाप का अनुभव न हो सकेगा। मेरा क्षेत्र है संयम और नियम, और संयम और नियम से पाप दूर रहता है। फिर भी आचार्य का अनुरोध है कि

मैं तुम्हें अपना शिष्य बनाऊँ। शिष्य बनाने के पहले तुम और आचार्य पर यह स्पष्ट कर देना उचित होगा कि मैं तुम्हें पुण्य का रूप दिखला दूँगा, और पुण्य को जानकर तुम पाप का पता लगा सकोगे।' [6] कुमारगिरि ने विशालदेव को समझाया - वासना पाप है, जीवन को कलुषित बनाने का एकमात्र साधन है। वासनाओं से प्रेरित होकर मनुष्य ईश्वरीय नियमों का उल्लंघन करता है और उनमें डूबकर मनुष्य अपने को और ब्रह्म को भूल जाता है। इसीलिए वासना त्याज्य है। कुमारगिरि आगे बताते हैं कि ईश्वर के तीन गुण हैं - (1) सत् (2) चित और (3) आनंद। वासना से रहित शुद्ध मन को ये तीनों गुण अर्थात सच्चिदानंद भगवान मिल सकते हैं। वासना में ममत्व का भाव प्रधान रहता है। उन दोनों में पाप-पुण्य और वासना इन विषयों पर चर्चा चलती है।

बीजगुप्त के भवन में श्वेतांक की गणना बीजगुप्त के छोटे भाई की तरह होती थी। उसे नगर में मान-सम्मान मिलता है। वह भोग-विलास के साधनों से परिचित हो गया था। श्वेतांक ब्रह्मचारी था। फिर भी चित्रलेखा के सौंदर्य को देखने के बाद वह उसकी ओर आकर्षित होता है। उसके हाथों से इच्छा न होते हुए भी मदिरा पिता है। लेकिन चित्रलेखा उसे भाई के रूप में प्रेम देना चाहती है। इसी बात से श्वेतांक स्वयं को अपराधी मानकर बीजगुप्त के पैरों में गिरता है। बीजगुप्त उसे माफ करता है, और वह कहता है, अपराध कर्म में होता है, विचार में नहीं। बीजगुप्त श्वेतांक को दंड के रूप में चित्रलेखा को रोज भवन तक पहुँचाने का काम सौंपता है। इससे यह दिखाई देता है कि बीजगुप्त का हृदय कितना विशाल है, दयालु और क्षमावान है।

कुमारगिरि के यहाँ रहकर विशालदेव ने कुमारगिरि में महान आत्मा देखी है। उनकी योग-साधना, ज्ञान के सामने वह नतमस्तक हो जाता है। एक दिन बीजगुप्त और चित्रलेखा सूर्यास्त के समय में रास्ता भूलकर योगी कुमारगिरि की कुटिया में रात्रिभर के लिए आश्रय की इच्छा से उपस्थित होते हैं। कुमारगिरि आश्रय देने में आनंदित होते हैं मगर अनुपम सुंदर चित्रलेखा को देखते ही चौंक उठते हैं। वे बताते हैं कि अपने आश्रम में स्त्री का प्रवेश निषिद्ध हैं। उसपर बीजगुप्त उत्तर देते हैं कि - 'भगवान, मुझे यह तो ज्ञात है कि यह एक योगी की कुटी है; पर यह नहीं सोचा था कि एक इंद्रियजीत योगी को केवल रात्रि-भर के लिए एक स्त्री को और उस स्त्री को, जो एक पुरुष के साथ है, आश्रय देने में संकोच होगा।' [7] अंत में कुमारगिरि ने दोनों को अतिथि मानकर आश्रय दिया तब चित्रलेखा बोली - 'प्रकाश पर लुब्ध पतंग को अंधकार का प्रणाम।' [8] चकित होकर कुमारगिरि ने चित्रलेखा की ओर देखा क्योंकि अपने जीवन में इतनी सुंदर स्त्री योगी कुमारगिरि ने नहीं देखी थी। फिर भी कुमारगिरि स्त्री के प्रति अपनी दुर्भावना प्रकट करते हैं। परंतु चित्रलेखा अपने अकाट्य तर्कों से योगी कुमारगिरि को अभिभूत कर लेती है। जैसे कुमारगिरि चित्रलेखा से कहते हैं - 'नर्तकी चित्रलेखा, तुम्हारे कवित्व की कर्कशता पर उन्माद का आवरण है, तुम्हारे विष को तुम्हारा सौंदर्य छिपाए हुए हैं। तुम मेरी अतिथि हो और तुमने मेरी अभ्यर्थना की है। आशीर्वाद देना मेरा धर्म है, भगवान तुम्हें सुमति प्रदान करें।' इस कथन पर चित्रलेखा हँस पड़ी। उसके मधुर हास्य में मनको लुब्ध कर देनेवाला पराग था - 'योगी। सुमति के अर्थ में भेद होता है, अनुराग का सुख विराग का दुःख है। प्रत्येक व्यक्ति अपने सिद्धांतों को निर्धारित करता है तथा उनपर विश्वास भी करता है। प्रत्येक मनुष्य अपने को ठीक मार्ग पर समझता है और उसके मतानुसार दूसरे सिद्धांत पर विश्वास करनेवाला व्यक्ति गलत मार्ग पर है।' [9] इसप्रकार के आपस के वार्तालाप में योगी कुमारगिरि ने चित्रलेखा में ज्ञान देखा और चित्रलेखा ने कुमारगिरि में स्वस्थ और आकर्षक पुरुष देखा। दोनों एक दूसरे से प्रभावित थे। चलते हुए चित्रलेखा ने कहा . . . 'योगी। तपस्या जीवन की भूल है, यह मैं तुम्हें बतलाए देती हूँ। तपस्या की वास्तवीकता है आत्मा का हनन। अच्छा, श्रीचरणों को नर्तकी चित्रलेखा का प्रणाम।' [10] बीजगुप्त के मन में डर पैदा हुआ। चित्रलेखा कुमारगिरि को मूर्ख कहकर बीजगुप्त को धोखा देती है, मगर वह अपने आपको धोखा न दे सकी। मन ही मन में उसने कहा - 'पर कुमारगिरि सुंदर अवश्य है।' [11]

महाराज चंद्रगुप्त की राजसभा में सम्राट चंद्रगुप्त, महामंत्री चाणक्य, योगी कुमारगिरि, सामंत बीजगुप्त तथा अन्य अनेक लोग उपस्थित थे। राजसभा में नीति, धर्म और ईश्वर जैसे गंभीर विषय पर चर्चा आरंभ हुई। महाराज चंद्रगुप्त ने महामंत्री चाणक्य से पूछा - 'नीति धर्म के अंतर्गत है या नहीं?' चाणक्य ने उत्तर दिया - 'धर्म ने नीति शास्त्र को जन्म नहीं दिया बल्कि नीति शास्त्र ने धर्म को जन्म दिया है।' [12] इस चर्चा में कुमारगिरि ने चाणक्य को पराजित किया। पूरा दरबार इस बात का साक्षी था। योगी ने सभी जन को प्रकाश-किरण दिखाकर प्रभावित किया। चाणक्य इस प्रकाश किरण को न देख सके, फिर भी उन्होंने चंद्रगुप्त मौर्य पर विश्वास रखकर अपनी हार मान ली। लेकिन सभा में प्रकट चित्रलेखा ने भ्रम का आवरण हटा दिया। और जो बात सत्य है, न चाहते हुए भी, योगी को माननी पड़ी। चाणक्य ने चंद्रगुप्त की अनुमति से विजय का मुकुट चित्रलेखा के मस्तक पर रख दिया। चित्रलेखा ने वह मुकुट दंडस्वरूप कुमारगिरि के मस्तक पर रख दिया। इस घटना से योगी के मन में हलचल मच गई। उसे लगने लगा आज तक की हुई योग साधना व्यर्थ गई है। परंतु चित्रलेखा उन्हें आश्वस्त करना चाहती है - 'योगी। तुम पराजित नहीं हुए। तुम विजयी हो।' [13]

राजसभा की इस घटना से चित्रलेखा योगी कुमारगिरि की ओर आकर्षित होती है। इसी कारण वह कुमारगिरि से दीक्षा लेना चाहती है। वह कुमारगिरि के यहाँ जाती है। चित्रलेखा ने जमीन पर पड़ा हुआ मुकुट कुमारगिरि को फिर से पहना दिया। कुमारगिरि ने चित्रलेखा के हाथ को जोर से दबाते हुए पूछा - 'नर्तकी। तुम मेरे साथ छाया की भाँति क्यों लगी हो?' चित्रलेखा ने उत्तर दिया - 'अपने ऊपर विजय पाने वाले से मैं दीक्षित होने के लिए आई हूँ।' पीछे हटते हुए योगी ने कहा - 'मेरी दीक्षा लेने के अर्थ है संसार के समस्त भोग-विलास तथा वासनाओं को सदा के लिए तिलांजलि दे देना। जिस अकर्मण्यता (शांति) से तुम घृणा करती हो, उसी अकर्मण्यता (शांति) को अपनाना जिस शुष्क साधना की तुम हँसी उडाती हो, उसी शुष्क साधना में अपने कोमल शरीर को तपाना।' [14] इसप्रकार योगी पहले दीक्षा देने के लिए तैयार नहीं होता। पर चित्रलेखा के असाधारण सौंदर्य के कारण उसके अंदर कंपन उत्पन्न होता है। और वह अपनी दुर्बलता नर्तकी के समक्ष काँपते मन से स्वीकार कर लेते हैं। बीजगुप्त दूरदर्शी विचार करनेवाला है। वह श्वेतांक से कहता है - 'जिसे तुम चित्रलेखा की विजय समझते हो वह उसकी बहुत बड़ी पराजय है। चित्रलेखा और कुमारगिरि कोई भी विजयी नहीं है, दोनों ही पराजित हुए हैं। परिस्थिति का चक्र तेजी के साथ घूम रहा है, उसी चक्र के फेरे में ये दोनों प्राणी फँस गए हैं।' [15]

बीजगुप्त ने चित्रलेखा का अंदाज लेने के लिए श्वेतांक को उसके पास भेजा। चित्रलेखा कुमारगिरि के यहाँ से उदास लौटी। श्वेतांक ने उसे विजय की बधाई दी। चित्रलेखा बोली - 'मेरी विजय पर। श्वेतांक, मैं बधाई की पात्री नहीं हूँ; वह मेरी विजय नहीं थी, वह मेरी एक बहुत बड़ी पराजय थी।' [16] श्वेतांक को चित्रलेखा में बहुत परिवर्तन आया हुआ दिखाई देता है। इस बात से उसे अचरज होता है। चित्रलेखा भी इस बात को स्वीकार करती है - 'सुनो। मेरी आज की विजय वास्तव में मेरी विजय न थी, वरन् मेरी पराजय थी। कुमारगिरि ने मेरे जीवन को बुरी तरह प्रभावित कर दिया है।' [17]

चित्रलेखा कुमारगिरि की ओर आकर्षित होती है, इतना ही नहीं अब वह उससे प्रेम भी करने लगती है। फिर चित्रलेखा श्वेतांक को गुप्तता की शपथ दिलाती है, इसी कारण बीजगुप्त से श्वेतांक झूठ बोलता है और अपने स्वामिनी के प्रेम के बारे में कुछ नहीं कहता। बीजगुप्त मानता है - 'मनुष्य स्वतंत्र विचारवाला प्राणी होते हुए भी परिस्थितियों का दास है। और यह परिस्थिति चक्र क्या है पूर्वजन्म के कर्मों के फल का विधान है। मनुष्य की विजय वहीं संभव है जहाँ वह परिस्थितियों के चक्र में पड़कर उसी के साथ चक्कर न खाए, वरन अपने कर्तव्याकर्तव्य का विचार रखते हुए उस पर विजय पाए।' [18] आजतक बीजगुप्त और चित्रलेखा में इतनी दूरी

कमी नहीं आई थी जो अब आई है। बीजगुप्त ने अपने हृदय की उद्‌विग्नता प्रकट करते हुए चित्रलेखा से प्रश्न किया - 'कई दिनों से तुम क्यों नहीं आई? इसका कारण क्या है?' उसपर चित्रलेखा ने अपना मुख उठाया - 'कारण पूछते हो। नहीं आ सकी क्योंकि आने की इच्छा न थी।' इस बात पर बीजगुप्त क्रोधित होता है, वह कहता है - 'आने की इच्छा न थी। इसका कारण जानने का मैं अधिकारी हूँ।' इस प्रकार चित्रलेखा सही कारण नहीं बता सकती, बीजगुप्त से उसे छिपाना चाहती है। वह सिर्फ कहती है - 'इन दिनों किसी अंश तक मेरा चित्त उद्‌विग्न रहा है, उस उद्‌विग्नता में मैं अपने को और अपनों को भूल-सी गई थी।' [19] इस तरह इन दोनों के बीच पहली बार इतनी दूरी आती है। चित्रलेखा स्वीकार करती है - 'इस परिवर्तनशील संसार में किसी भी चीज का बदल जाना अस्वाभाविक नहीं है।' [20]

आर्य मृत्युंजय पाटलिपुत्र के श्रेष्ठ सामंत थे, जो क्षत्रिय होकर भी ब्राह्मण के जैसे पेश आते। इनके पास प्रतिष्ठा धन की कमी नहीं थी। उन्हें एकमात्र संतान उनकी अप्रतिम सुंदर पुत्री यशोधरा थी। जिसका प्यार पाने के लिए सभी सामंत इच्छुक थे। मगर मृत्युंजय सामंतों में से बीजगुप्त को ही योग्य समझते थे। यशोधरा के जन्मदिन पर बीजगुप्त और चित्रलेखा दोनों को भी बुलाया जाता है। आमंत्रण पाकर बीजगुप्त, चित्रलेखा और श्वेतांक मृत्युंजय के घर पहुँचे। यशोधरा का शालीन सौंदर्य देखकर चित्रलेखा चकित रह गई। सभ्य समाज की स्त्रियों में चित्रलेखा का आना कुछ स्त्रियों को अच्छा नहीं लगा। उन्होंने चित्रलेखा पर ताने कसे। चित्रलेखा ने भी रोषपूर्वक उनको उत्तर दिया। बीजगुप्त के पूछने पर चित्रलेखा ने कहा कि स्त्रियों में हँसी-मजाक चल रहा था। लोगों के आग्रह पर बीजगुप्त ने सुंदर गाना गाया। यशोधरा ने भी गाया सब के आग्रह पर चित्रलेखा ने नृत्य आरंभ किया। उसी समय कुमारगिरि शिष्य विशालदेव के साथ पधारे। मृत्युंजय कुमारगिरि का स्वागत करने चले गए। चित्रलेखा का नृत्य रुक गया। चित्रलेखा ने इसमें अपना अपमान माना। रूठकर वह जाना चाहती थी। उसे रोककर कुमारगिरि के पूछनेपर वह बताती हैं कि - 'मेरी दृष्टि में कला का सर्वोच्च्य स्थान है। जो मनुष्य कला का अपमान करता है, वह मनुष्य नहीं है, पशु है। मृत्युंजय को कुमारगिरि का स्वागत करने के लिए नृत्य को बंद कर देना मेरा अपमान नहीं है तो क्या है।' [21] चित्रलेखा कुमारगिरि के आग्रह से रुकती है और यशोधरा के कहने से पुनःनृत्य करती है। इसी समय कुमारगिरि को संसार में आकर्षण निर्माण हुआ।

भोजन आरंभ हुआ। बीजगुप्त ने यशोधरा से बातें करते समय बताया कि आप से परिचय हुआ यह मेरा अहोभाग्य है। चित्रलेखा ने हँसते हुए कहा - 'भगवान करे यह परिचय घनिष्ठता में परिणत हो, और घनिष्ठता जीवन के पवित्र बंधन में।' [22] यह सुनकर बीजगुप्त चकित हो उठा; पर यशोधरा को बहुत अच्छा लगा। यशोधरा के पूछने पर बीजगुप्त ने श्वेतांक का परिचय दिया कि वह उसका सेवक और छोटा भाई है। यशोधरा ने श्वेतांक की ओर ध्यानपूर्वक देखा और सोचने लगी कि कितना भोला और सुंदर नवयुवक है। पहली ही मुलाकात में यशोधरा सहज रूप से श्वेतांक की ओर आकृष्ट हो गई थी। भोजन के उपरांत बीजगुप्त ने मृत्युंजय से श्वेतांक का परिचय करा दिया।

भोजन के बाद सब लोग चले गए तब मृत्युंजय ने बीजगुप्त, चित्रलेखा, श्वेतांक, कुमारगिरि और विशालदेव को रोक लिया था। उन्होंने बीजगुप्त से कहा कि आज के उत्सव का उनसे घनिष्ठ संबंध है फिर उन्होंने यशोधरा की ओर देखा। परंतु ये विचार बीजगुप्त को अच्छे नहीं लगे, उसके मुख का रंग उड़ गया। मृत्युंजय ने उससे पूछा कि क्या उसका विवाह हुआ है। उत्तर में बीजगुप्त ने कहा कि 'शास्त्रानुसार नहीं।' लेकिन वह स्वयं को विवाहित मानता है। चित्रलेखा को वह अपनी पत्नी मानता है। उसने आगे कहा कि चित्रलेखा से उसका संबंध पति-पत्नी जैसा है। प्रेम में उसका विश्वास है और उसके प्रेम की अधिकारिणी चित्रलेखा के अतिरिक्त कोई दूसरी स्त्री नहीं हो सकती। इसबात पर मृत्युंजय बीजगुप्त को समझाते हुए कहते

हैं कि - 'विवाह पुत्रोत्पत्ति के लिए होता है और इसलिए आवश्यक है। चित्रलेखा की संतान बीजगुप्त की उत्तराधिकारी नहीं हो सकती। कभी इस पर विचार किया है।' [23] चित्रलेखा भी बीजगुप्त के कल्याण के लिए उसका त्याग करना चाहती है। उसे लगता है कि वह बीजगुप्त से दूर जाएगी, तभी यह संभव हो सकेगा। उसी समय चित्रलेखा कुमारगिरि से पूछती है - 'योगी, एक प्रश्न और करूँगी, क्या तुम मुझे गुरुदीक्षा देने के लिए तैयार हो? यदि हाँ तो फिर इसी समय मैं तुम्हारी शिष्या हुई।' [24] योगी इसे असंभव बताते हैं। चित्रलेखा अपने अनुराग के मार्ग को छोड़ने के लिए तैयार होती है। बीजगुप्त को ये विचार अच्छे नहीं लगते। वह यह कहते हुए वहाँ से चला जाता है कि - 'मेरा और चित्रलेखा का संबंध अमर है।' चित्रलेखा के विचार अलग है। वह बीजगुप्त और यशोधरा का विवाह होना चाहिए ऐसा कहती है। और कुमारगिरि कहते हैं, 'मृत्युंजय। यशोधरा के लिए बीजगुप्त से अच्छा वर तुमको नहीं मिलेगा।' इस प्रकार एक-एक करके सभी वहाँ से चले जाते हैं।

चित्रलेखा अपने प्रेम विषयक विचारों का चिंतन करने लगी। उसका प्रथम प्रेम ईश्वरीय था। जो उसने अपने पति से किया था। उसमें पवित्रता थी। पति के प्रति निःसीम भक्ति थी। मगर पति मर जाने के बाद वह संयम-युक्त साधनामय जीवन ज्यादा समय तक न जी सकी। उसके जीवन में कृष्णादित्य आ जाता है। वह उससे प्रेम करने लगती है। इस बार प्रेम दैवी न था; प्राकृतिक था। उसकी आत्महत्या के बाद वह बीजगुप्त से प्रेम करने लगती है। उसके प्रेम में पिपासा और आत्मविस्मरण का ही अनुभव हुआ। उसके बाद वह सुंदर, तेजोमय युवक योगी कुमारगिरि की ओर आकृष्ट हुई, और उसके साथ प्रेम करने लगती है।

बीजगुप्त का त्याग कर सारे आभूषण उतार कर एक केसरिया रंग की रेशमी साड़ी पहनकर, अपने भवन का समस्त भार विश्वस्त दासी सुनयना के हाथों सौंपकर, चित्रलेखा ने बीजगुप्त के नाम एक पत्र लिखकर दासी के पास दिया और कहा कि अगर वह संध्या समय तक न लौटी तो यह पत्र बीजगुप्त को दे दे। फिर वह कुमारगिरि की कुटी की ओर चल दी। कुमारगिरि ध्यानावस्था में थे। उनके पास ही नेत्र बंद करके चित्रलेखा बैठ जाती है। कुमारगिरि की समाधि टूटती है। आँखें खुलने पर उन्हें शांत और तेज से भरी चित्रलेखा के दर्शन होते हैं। चित्रलेखा की बड़ी-बड़ी आँखें देखकर काँप उठते हैं और उससे कहते हैं कि - 'तुम्हें दीक्षा देने के अर्थ होते हैं, गिरना, नीचे गिरना। कहाँ? नीचे-ही-नीचे जहाँ अंत ही नहीं है। मैं तुम्हें जानता हूँ और मैं अपने को भी जानता हूँ। तुम्हें ऊपर उठाना कठिन है, स्वयं नीचे गिरना सरल है।' [25] चित्रलेखा महसूस करती है कि वह कुमारगिरि से प्रेम करती है। कुमारगिरि ने अपने चरणों पर पड़ी हुई चित्रलेखा को उठाया - 'अच्छा देवि। तो फिर तुम्हें दीक्षा दूँगा। भगवान की इच्छा है कि मैं संसारस्थित वासनाओं से युद्ध करूँ - तो फिर ऐसा ही हो।' [26] प्रथम कुमारगिरि ने विशालदेव से चित्रलेखा के लिए अलग कुटि बनाकर उसमें ठहराने की सूचना दी परंतु शिष्य की शंका से आहत होकर उन्होंने कहा - नहीं। चित्रलेखा मेरी ही कुटी में रहेगी। कुमारगिरि जानते थे कि यह निर्णय आग से खेलना है। उन्होंने चित्रलेखा को अपनी ही कुटी में रखने का निश्चय किया। कुमारगिरि विशालदेव से कहते हैं कि - 'अब तुम्हें अवसर मिला है कि तुम पाप देखो और उसपर विजय भी देखो। तुम जा सकते हो। संध्या-वंदन का समय हो चुका है।' [27]

मृत्युंजय के प्रस्ताव को अस्वीकार कर लौटने पर बीजगुप्त को दुख होने लगा कि उसने मृत्युंजय का अपमान किया है। उसने एक पत्र क्षमा-प्रार्थना का लिखकर श्वेतांक के हाथ देकर उसे मृत्युंजय के घर भेजा। उसमें वे उस दिन के अपमान के लिए क्षमा याचना करते हैं। भवन में मृत्युंजय नहीं थे, यशोधरा थी। उसने श्वेतांक का स्वागत किया। पाटलिपुत्र की सर्वश्रेष्ठ सुंदरी के साथ प्रतीक्षा में बैठना सुखद है। ऐसा श्वेतांक के मुख से सुनकर यशोधरा लज्जित हो उठी। मृत्युंजय के आने पर श्वेतांक ने बीजगुप्त का पत्र उन्हें दिया। पत्र पढ़कर उन्हें आनंद हुआ। उन्होंने श्वेतांक और बीजगुप्त दोनों को रात के भोजन के लिए आमंत्रित किया। वार्तो-

बातों से पता चला की श्वेतांक मृत्युंजय के गुरुभाई का पुत्र है और सूर्यवंशी क्षत्रिय है। श्वेतांक मन में सोचने लगा, क्या यशोधरा से मेरा विवाह होगा? रात को बीजगुप्त और श्वेतांक मृत्युंजय के घर भोजन के लिए आए। उत्तर प्रदेश, हिमालय आदि स्थानों के पर्यटन की बातें बीजगुप्त ने बताई। बीजगुप्त जान गाया कि श्वेतांक यशोधरा की ओर आकृष्ट हुआ है। यशोधरा भी उसकी ओर आकर्षित हुई है। बीजगुप्त यशोधरा के सौंदर्य से मोहित था, लेकिन वह चित्रलेखा को भूला नहीं सकता था। भला वह मदिरा की मादकता से आदि होने के कारण उसे कैसे छोड़ सकता है। बीजगुप्त जब भवन में पहुँचता है तो उसे चित्रलेखा का पत्र मिलता है, लेकिन वह चित्रलेखा के इस आत्मबलिदान और आत्मत्याग से प्रसन्न नहीं है। बीजगुप्त को लगता है चित्रलेखा ने यह निर्णय लेकर बड़ी भूल की है। बीजगुप्त इस पूरे संसार में सिर्फ एक ही स्त्री से प्रेम करता है और वह है चित्रलेखा। उसी को ही अपने दिल से पत्नी भी मानता था। कुमारगिरि और चित्रलेखा का प्यार उसे एक विचित्र संयोग लगता है। बीजगुप्त से रहा नहीं जाता क्योंकि वह चित्रलेखा से ही सच्चा प्यार करता है। बीजगुप्त को इसी विचार में बड़ी देर तक नींद नहीं आई। अर्धरात्रि के समय वह चित्रलेखा से मिलने कुमारगिरि की कुटी पर पहुँचा। कुमारगिरि समाधि लगाए, आँखें मूँदे बैठे थे, चित्रलेखा सो रही थी। उन दोनों ही की एक ही साथ आँखें खुलीं तो सामने बीजगुप्त। कुमारगिरि ने उसे आशीर्वाद दिया; पर चित्रलेखा ने आँखें बंद कर लीं। कुमारगिरि को बीजगुप्त के आने से आश्चर्य होता है और चित्रलेखा को भय लगता है। बीजगुप्त चित्रलेखा से कहता है यह विवाह मेरे लिए असंभव है, मैं चित्रलेखा के अलावा किसी का विचार नहीं करता। इस विचार के कारण चित्रलेखा बीजगुप्त के चरणों पर गिरती है और निवेदन करती हैं - 'बीजगुप्त तुम पूज्य हो; तुम मनुष्य नहीं हो, देवता हो। मैं तुम्हें जानती हूँ, पर साथ ही मैं यह भी जानती हूँ कि मैंने तुमसे प्रेम करके तुम्हारे जीवन को निरर्थक बना दिया है। बीजगुप्त, तुम्हारा विवाह होना ही चाहिए - तुम मुझसे प्रेम करते हो, मुझे सुखी बनाना तुम्हारा कर्तव्य है। मुझे तब तक सुख न होगा, जब तक मैं तुम्हें विवाहित न देखूँगी और तुम्हारी संतान से माता न कहलाऊँगी। तुम विवाह कर लो, और यह याद रखना बीजगुप्त, कि मैं तुमसे सदा प्रेम करती रहूँगी। क्या प्रेम का प्रधान अंग भोग-विलास ही है, क्या बिना भोग-विलास के प्रेम असंभव है? मैं तुमसे इस समय केवल शारीरिक संबंध तोड़ रही हूँ; इसकी अपेक्षा हमारा आत्मिक संबंध और दृढ़ हो जाएगा।' [28]

बीजगुप्त नाराज होकर वापस लौट जाता है। इस बात पर कुमारगिरि को आश्चर्य होता है क्योंकि चित्रलेखा ने अभी-अभी उसपर प्रेम जाहिर किया है। तब वे प्रश्न करते हैं, क्या दो व्यक्तियों से एक साथ प्रेम संभव है? चित्रलेखा इस प्रश्न पर उत्तर देती है - 'क्या आप समझते हैं कि यह असंभव है? गुरुदेव, पुरुष दो विवाह कर सकता है, और वह दोनों पत्नियों से प्रेम कर सकता है; फिर स्त्री क्यों ऐसा नहीं कर सकती। स्त्री अपने पति से उतना ही प्रेम करती है जितना वह पुत्र से। आत्मिक संबंध कई व्यक्तियों से एक साथ संभव है।' [29] इस प्रकार चित्रलेखा एक साथ दो पुरुषों से आत्मिक संबंध मानती है, शारीरिक नहीं। यह कुमारगिरि के लिए पहेली बनकर रहती है।

चित्रलेखा के वियोग का दुख बीजगुप्त के लिए असह्य था, पर उसने उसे साहसपूर्वक सहन करने का निश्चय किया। मनःशांति के लिए कुछ समय पाटलिपुत्र से बाहर काशी जाने का भी उसने निर्णय किया। श्वेतांक को भी तैयार रहने के लिए जब उसने कहा तो श्वेतांक को अच्छा नहीं लगा। कारण वह यही रहकर यशोधरा से अपने प्रेम को पुष्ट करना चाहता था। उसने बीजगुप्त से आज्ञा ली कि मृत्युंजय से बिदा माँगने वह स्वयं जाएगा। वे इसकी व्यवस्था का भार श्वेतांक पर सौंपते हैं। बीजगुप्त चित्रलेखा को भूलने और यशोधरा के प्रेमभरे शीतल आँचल से दूर रहने के लिए काशी जाने का मार्ग ढूंढते हैं।

श्वेतांक मृत्युंजय के यहाँ जाता है। श्वेतांक ने यशोधरा से बिदा माँगी; पर उसके चेहरे पे न सुख न दुख के भाव दिखाई दिए तब वह उदास हुआ। फिर उसने कहा कि चित्रलेखा ने बीजगुप्त का साथ छोड़कर कुमारगिरि से दीक्षा ली है। चित्रलेखा के अतिरिक्त वे किसीसे प्रेम नहीं कर सकते, अतः अपना दिल बहलाने काशी जा रहे हैं। वह यशोधरा के मुख से बीजगुप्त की प्रशंसा नहीं सुन सका। मन ही मन वह ईर्ष्याग्नि से जला जा रहा था। यशोधरा के फटकारने पर वह स्वीकार कर लेता है - मैं तुमसे प्रेम करता हूँ। इसपर यशोधरा को आश्चर्य होता है।

मृत्युंजय से यशोधरा काशी चलने के लिए आग्रह करती है। वह भी बीजगुप्त के साथ काशी-यात्रा का निश्चय कर लेती है। यह समाचार श्वेतांक बीजगुप्त को बताता है मगर बीजगुप्त इस पर प्रसन्न नहीं हुए। वह तो यशोधरा ही नहीं बल्कि छाया से भी दूर रहना चाहते थे। बीजगुप्त, श्वेतांक, मृत्युंजय और यशोधरा काशी के लिए प्रस्थान करते हैं। बीजगुप्त विचारों में इतना खो गया था कि आधी रात बीत गई; पर विश्राम के लिए कहीं रुकने की बात उसके दिमाग में नहीं आई। आखिर मृत्युंजय के एक परिचित सामंत की वाटिका में वे सब विश्राम के लिए रुके।

चित्रलेखा और यशोधरा के विचारों के कारण बीजगुप्त को रात में नींद नहीं आई। प्रातः समय जल्द ही भ्रमण के लिए बीजगुप्त चल पड़ा तो यशोधरा भी वही दिखाई दी। यशोधरा प्रकृति के सौंदर्य की तारीफ कर रही थी, पर चित्रलेखा के वियोग दुख से दुखी तथा यशोधरा से नए संबंध जोड़े या न जोड़े इस पसोपेश में पड़ा बीजगुप्त नाना तर्क देकर सिद्ध कर रहा था कि प्रकृति कितनी कुरूप है। उसने बताया कि दूर्वादल में कीड़े कोड़े होते हैं। प्रकृति में कहीं कुहरा छाया रहता है, तो कहीं कड़ी धूप पड़ती है। फूलों में काँटे होते हैं। पक्षियों का संगीत भावहीन होता है। इतना ही नहीं, तो जंगल में शेर जैसे हिंस्र प्राणी होते हैं, नदियों में मगर होते हैं, घास में साँप छिपे रहते हैं, जो मनुष्य को बेवजह काटते हैं। बीजगुप्त के अजीब तर्कों को सुनकर यशोधरा आश्चर्य चकित हुई। उसने पिता के सामने बीजगुप्त के अजीब तर्कों की चर्चा करते हुए तारीफ की। यशोधरा को बीजगुप्त की ओर आकर्षित देखकर श्वेतांक का मुख पीला पड़ गया। बीजगुप्त के बारे में उसका सेवक होने के कारण विरोध प्रकट न करने की बात जब श्वेतांक ने कही तो उसकी स्वामिभक्ति, कर्तव्यभावना और पराधीनता आदि के विचार से यशोधरा की आँखों में श्वेतांक के प्रति सहानुभूति मिश्रित प्रेमभावना झलकने लगी।

योगी कुमारगिरि नर्तकी चित्रलेखा से जितना ही दूर हटने का प्रयास करते थे, उससे उतने ही अधिक निकट आते जा रहे थे। ध्यानावस्था में भले ही उनकी आँखें बंद रहती थीं, तब भी चित्रलेखा के दर्शन के लिए बार-बार खुल जाती थीं। कुमारगिरि की कुटिया में चित्रलेखा के संपर्क से कुमारगिरि चंचल हो उठते हैं। साधना में उनका मन नहीं लग रहा था। मन चंचल बन गया था। सारी इंद्रियाँ वासना की ओर उन्मुख हो रही थीं। उधर चित्रलेखा की स्थिति ठीक इसके विपरीत थी। कुमारगिरि से उसके प्रेम की भावना प्रतिक्षण क्षीण होती जा रही थी। वह साधना और तपस्या सीखने की ओर उन्मुख हो रही थी। कुमारगिरि को लगता है कि चित्रलेखा में बड़ी आकर्षण शक्ति है। निराकार को छोड़कर वे साकार की उपासना को उद्युत होते हैं। चित्रलेखा को इस प्रयोग में सहायक नहीं, बल्कि उसे ही लक्ष्य बनाना चाहते हैं।

कुमारगिरि ध्यानावस्था में होंगे ऐसा सोचकर वह उनकी कुटी में आई। उसके पैरों की आहट से कुमारगिरि की आँखें खुल गईं। चित्रलेखा ने योगी से जिसप्रकार कहा था उसी प्रकार कुमारगिरि चित्रलेखा से कहने लगे - 'मनुष्य का कर्तव्य विराग के स्थान पर अनुराग (प्रेम) है। क्या संसार से विराग (विरक्ति) और ईश्वर से अनुराग ये दोनों चीजें एक है? मैं जब तक इस प्रश्न का उत्तर न दे दूँगा, मुझे शांति नहीं मिलेगी।'

कुमारगिरि के इन विचारों और भाव-परिवर्तन को देखकर चित्रलेखा घबरा गई। योगी कुमारगिरि के योग-बल, तपस्या-साधना, ज्ञान-तर्क, संयम-नियम आदि के कारण चित्रलेखा उनकी ओर आकृष्ट हुई थी और इसी आकर्षण के कारण उसमें योगी कुमारगिरि से प्रेम-भावना निर्माण हुई थी। पर उसी योगी में जैसे-जैसे भोग की भावना बढ़ती गई वैसे चित्रलेखा को योगी से घृणा होने लगी। वह योगी से दूर हटने लगी। उसे अब पक्का विश्वास हुआ कि न अब वह योगी से प्रेम कर सकेगी, न योगी की पूजा कर सकेगी, न ही योगी से कुछ सीख सकेगी। योगी के मुँह से चित्रलेखा की आकर्षण शक्ति की प्रशंसा सुनकर उसे लज्जा होने लगी। कुमारगिरि के चेहरे के विकृत भाव देखकर चित्रलेखा काँप उठी। कुमारगिरि पर वासना का भूत सवार हुआ। कुमारगिरि चित्रलेखा को आलिंगन पाश में लेकर उससे कहने लगे - 'नर्तकी। मैं तुमसे प्रेम करता हूँ।' [30] उसी समय चित्रलेखा ने योगी को सचेत किया। कुमारगिरि उसे छोड़कर बाहर चले जाते हैं। चित्रलेखा यह सोचकर रोने लगी कि वह स्वयं तो गिरी ही; साथ-साथ उसने दूसरे को भी गिराया। कुमारगिरि आत्मग्लानि के कारण कुटी छोड़कर कहीं भाग जाना चाहते थे; पर उसकी अंतरात्मा उन्हें साथ नहीं देती। परंतु जब भी चित्रलेखा को देखते हैं उनके मन में वासना निर्माण होती रही। ध्यान लगाने की लाख कोशिश करने पर भी वे ध्यानमग्न नहीं हो पाए।

सबेरे आँख खुलने पर चित्रलेखा ने निश्चित किया कि अब आश्रम में कुमारगिरि के पास रहना उचित नहीं। चित्रलेखा विशालदेव के सामने अपनी भूल स्वीकार करती है। वह कहती है - 'तो सुनो विशालदेव, मैं समझती हूँ कि मैंने यहाँ आकर भूल की। मैं ऊपर उठने आई थी, पर देखती हूँ कि यह ऊपर उठना नहीं है, वरन नीचे गिरना है।' [31] वह इसको पाप समझती है और इससे मुक्ति पाने के लिए वह विशालदेव से सहायता माँगती है।

एक दिन संध्यासमय विशालदेव पाटलिपुत्र से समाचार लेकर आता है और चित्रलेखा को सुनाता है कि बीजगुप्त और श्वेतांक तीर्थ-यात्रा के लिए गए हुए हैं। समाचार सुनकर चित्रलेखा बहुत व्याकुल होती है। अब चित्रलेखा कुमारगिरि से प्रेम नहीं करती। कुमारगिरि उसे रोकना चाहते हैं क्योंकि वे उसपर विजय पाना चाहते हैं। चित्रलेखा योगी का भ्रम दूर करती है - 'योगी, तुम्हें मेरे ऊपर विजय पाना नहीं है, तुम्हें अपने ऊपर विजय पाना है, जब तक यहाँ रहूँगी, तुम अपने ऊपर विजय नहीं पा सकोगे, इतना मैं भली भाँति जानती हूँ। मेरे चले जाने में ही तुम्हारा कल्याण है।' [32] चित्रलेखा आगे बताती है कि मैं आपका आश्रम छोड़कर आपकी उद्देश्य-सिद्धि में सहायता करना चाहती हूँ। लेकिन कुमारगिरि यह मानने के लिए तैयार नहीं होता। नहीं, ऐसा नहीं हो सकता, क्योंकि तुम्हारे चले जाने पर मैं विजय किस पर पाऊँगा? वे चित्रलेखा से प्रार्थना, आग्रह, अनुरोध करने लगे कि उनके उद्देश्य की सफलता के लिए चित्रलेखा उन्हें छोड़कर न जाए। चित्रलेखा ने कुमारगिरि का अनुरोध स्वीकार कर लिया।

बीजगुप्त, श्वेतांक, मृत्युंजय और यशोधरा सभी काशी पहुँचे। यशोधरा और बीजगुप्त का शीघ्र विवाह हो जाए ऐसी इच्छा मृत्युंजय करते हैं, ताकि उसके बाद वह संन्यास लेने का विचार करते हैं। बीजगुप्त और यशोधरा दोनों एक-दूसरे की ओर निर्निमेष दृष्टि से देखने लगे तो श्वेतांक मर्माहत हो उठा और उसने काशी-भ्रमण के लिए पूछा। मृत्युंजय और बीजगुप्त दोनों तैयार नहीं थे अतः श्वेतांक और यशोधरा दोनों नगर-भ्रमण के लिए चले गए। थोड़ी देर के बाद मृत्युंजय और बीजगुप्त घूमते हुए नदी किनारे आए। उसी समय यशोधरा-श्वेतांक को नौका पर जाते देखकर बीजगुप्त ने आवाज दी। श्वेतांक को अच्छा नहीं लगा। वह बोला 'नाश हो।' श्वेतांक को बुरा लगा।

बीजगुप्त अनजाने ही यशोधरा की ओर आकर्षित होता जा रहा था। बीजगुप्त यशोधरा से दूर रहना चाहता है मगर वह बिना उसकी इच्छा से उसके जीवन में आ जाती है। चित्रलेखा बिना उसकी इच्छा से चली जाती है, इसे ही बीजगुप्त विचित्र संयोग मानता है। काशी जाकर भी उसके मन को शांति नहीं मिली। उसी बीच श्वेतांक के यशोधरा के बारे में भाव बीजगुप्त समझता है। चित्रलेखा को वह भूल नहीं सकता। फिर भी उसके मन में अनेक विचार आते हैं। बीजगुप्त आगे सोचने लगा - उसे अब विवाह करके वंश-वृद्धि करनी चाहिए। यशोधरा एक रत्न है, वह पवित्रता की प्रतिमा है, किंतु क्या उसके साथ बीजगुप्त का विवाह हो सकेगा? बीजगुप्त ने ही उसके साथ विवाह करने से प्रथम इन्कार किया था। अगर मृत्युंजय ने मेरी प्रार्थना अस्वीकार कर दी तो? बीजगुप्त गंगा के तीर पर भ्रमण करने चला जाता है। वहाँ पर एक युवक और संन्यासी का वार्तालाप सुनता है। उसके बाद वह स्वयं उस संन्यासी से प्रश्न पूछता है और अपने हृदय का भार दूर करता है। यह सब करने पर भी अंत में मन में कहीं उसे चित्रलेखा की याद आती रहती है, वह उसे भूल नहीं सकता और पाटलिपुत्र जाने का निश्चय करता है। वहाँ बीजगुप्त शांत बैठता है, अकेला-अकेलापन उसे महसूस होता है।

चित्रलेखा जैसी नर्तकी के सामने पराजित होने से कुमारगिरि खिन्न थें। वह सोचने लगे कि किसी भी तरह से चित्रलेखा को वश करना ही होगा। परंतु उस मार्ग में बाधक है बीजगुप्त। चित्रलेखा बीजगुप्त से प्रेम करना छोड़ देगी तभी वह मुझे आत्म-समर्पण कर देगी। अपना संयम कितना जबर्दस्त है यह दिखाने के लिए ही उन्होंने चित्रलेखा को अपनी ही कुटी में रहने के लिए कहा था; पर वास्तवता यह थी कि विषय वासना से बचने की उनकी भावना स्थिर न रह सकी। चित्रलेखा को वश करने की भली-बुरी चालें उनके मस्तिष्क में घूमती रहतीं। चित्रलेखा को लेकर कुमारगिरि के मन में द्वंद्व उठ खड़ा हुआ।

एक महीने बाद रात के समय कुमारगिरि ने चित्रलेखा को अपने पास बिठाया और कहा कि यशोधरा बीजगुप्त के साथ काशी गई है और उन दोनों का विवाह हो गया है। यह सब कुमारगिरि उससे झूठ बोलता है, क्योंकि उसे उसपर विजय पाना है। चित्रलेखा का प्रेम पाने के लिए। वह मानता है कि चित्रलेखा उससे प्रेम नहीं करती। 'शायद इसलिए कि वह एक व्यक्ति से प्रेम करती है। यदि चित्रलेखा बीजगुप्त से प्रेम करना छोड़ दे तो संभव है, नहीं निश्चय है कि वह मुझे आत्म-समर्पण कर दे। बीजगुप्त को चित्रलेखा के मार्ग से हटाना होगा।' [33] कुमारगिरि चित्रलेखा से बदला लेना चाहता है। इसलिए वह उससे झूठ बोलता है कि बीजगुप्त यशोधरा के साथ वैवाहिक जीवन का आनंद भोग रहा है। बीजगुप्त के विवाह की बात सुनते ही चित्रलेखा का मुख पीला पड़ गया। लेकिन चित्रलेखा अविश्वास दिखाती है। खबर सुनते ही चित्रलेखा हताश होकर बैठ गई और बोली - 'क्या तुम सच कह रहे हो योगी? क्या बीजगुप्त ने यशोधरा के साथ विवाह कर लिया? नहीं योगी। यह नहीं संभव है।' [34] बीजगुप्त की खबर से चित्रलेखा लगभग टूट-सी गई थी। परिस्थिति से लाभ उठाने के उद्देश्य से ही कुमारगिरि ने चित्रलेखा का हाथ पकड़ा और प्रेम की याद दिलाई। चित्रलेखा ने विरोध नहीं किया। मौका पाकर कुमारगिरि ने कहा - 'प्रेम। प्रेम मेरा धर्म हो गया है। तुम मेरे जीवन में आ गई हो, तुम मुझे प्रेम की दीक्षा देने आई हो। आओ हम-तुम एक हो जाए।' [35] कुमारगिरि की उन्मादपूर्ण बातों से चित्रलेखा प्रेमविभोर हुई। उसने कुमारगिरि की हाँ में हाँ मिलाते हुए कहा - 'तो फिर ऐसा ही हो।' [36] चित्रलेखा को लगने लगा आज वह पराजित हुई और उसने आवेग में आकर कुमारगिरि के समक्ष आत्मसमर्पण कर दिया। कुमारगिरि की भी यही इच्छा थी, जो पूरी होती है। विशालदेव समझ सकता है कि चित्रलेखा के आने से कुटिया की शांति भंग हो रही है। वह चित्रलेखा को समझाना चाहता है।

प्रातःकाल जब चित्रलेखा जाग गई तो उसकी मनःस्थिति उद्विग्नपूर्ण थी। जिस योगी के साथ रात भर उसने भोग-विलास किया, उसके मुख पर घृणा का भाव व्याप्त है। चित्रलेखा विशालदेव को बीजगुप्त के पास सच्ची खबर लाने को कहती है। विशालदेव चित्रलेखा को समझाना चाहता है। वह उससे कहता है तुम हम लोगों पर दया करो। इस बात पर चित्रलेखा हँस पड़ी - 'दया। किसपर दया करने को कह रहे हो और किससे दया करने को कह रहे हो? तुम बधिक से दया की आशा करते हो - तुम संहार-कर्ता से निर्माण कराना चाहते हो? भूलते हो। भूलते हो।' [37]

चित्रलेखा के आग्रह पर विशालदेव नगर जाता है। श्वेतांक से उसकी भेंट होती है। उससे पूरा समाचार ज्ञात होता है। बीजगुप्त के बारे में चित्रलेखा को झूठी बात कुमारगिरि ने बताई थी इसका पता लग जाता है। विशालदेव बताता है कि - यशोधरा और श्वेतांक का जल्द ही विवाह हो सकता है। चित्रलेखा के प्रति बीजगुप्त का प्रेमभाव ज्यों-का-त्यों है। यह सुनते ही कुमारगिरि का आश्रम आज ही छोड़ जाने की बात चित्रलेखा ने कही।

कुमारगिरि चित्रलेखा से कहने लगा - 'अभी तक तुम कहाँ थी मेरी रानी - आओ। आओ।' पर चित्रलेखा के नेत्रों से अपने नेत्रों के मिलने के साथ ही उनका पागलपन दूर हो गया। चित्रलेखा के नेत्र जल रहे थे - उनमें घृणा, क्षोभ और ग्लानि के भावों का सम्मिश्रण था, उसने तड़प कर कहा - 'नीच और झूठे पशु। अलग रहो।'

कुमारगिरि हट गए, चित्रलेखा ने कहा - 'तुमने मुझे धोखा दिया। वासना के कीड़े। तुम मुझसे झूठ बोले। तुम्हारी तपस्या विफल हो जाएगी और तुम्हें युगों-युगों नरक में जलना पड़ेगा। मैं जाती हूँ - अब तुम मुझे रोक न सकोगे।' [38] चित्रलेखा कुमारगिरि को तुम वासना के कीड़े हो ऐसा कहकर कुमारगिरि की कुटिया से चली जाती है।

इधर बीजगुप्त के मन में यशोधरा से विवाह करने के विचार आते हैं। श्वेतांक को जब पता चला कि बीजगुप्त यह विचार सुनकर व्यग्र-सा दिखाई देता है। इसलिए बीजगुप्त ने उसकी व्यग्रता का कारण पूछा। श्वेतांक ने स्पष्ट कह दिया - 'मैं सामंत मृत्युंजय की कन्या यशोधरा का पाणि-ग्रहण करना चाहता हूँ।' [39] यह सुनते ही बीजगुप्त को जैसे बिच्छुओं ने डंक मार दिए। क्रोध से वह श्वेतांक पर बरस पड़ा - 'तुम जानते हो श्वेतांक कि मृत्युंजय ने उसके पाणि-ग्रहण का प्रस्ताव मुझसे किया था - और मैंने उस समय चित्रलेखा के कारण उस प्रस्ताव को ठुकरा दिया था। तुम यह भी जानते हो कि चित्रलेखा मेरे जीवन से निकल गई है, और मैं यशोधरा की ओर यथेष्ट आकर्षित हूँ।' [40]

श्वेतांक की आँखों से अश्रुधारा बह चली। वह स्वामी के चरणों पर गिरकर क्षमा-प्रार्थना करने लगा। क्रोध के आवेग में बीजगुप्त ने श्वेतांक को चले जाने के लिए कहा और वह अपने दुर्भाग्य को कोसने लगा। धीरे-धीरे वह शांत हुआ और सोचने लगा - क्या मेरा चित्रलेखा के प्रति प्रेम मर गया है? यह क्यों? मैं कितना निर्बल हूँ कि एक स्त्री से प्रेम करके अब दूसरी स्त्री से प्रेम कर रहा हूँ। क्या वास्तव में प्रेम अस्थायी है? नहीं .... प्रेम अमर होता है। और तब से उसे ऐसा महसूस होने लगा कि चित्रलेखा के विषय में उसके हृदय में कोई बुरी भावना नहीं थी। उसने निश्चय किया कि उसका चाहे जो हो; पर श्वेतांक का जीवन उसे दुःखमय नहीं बनाना चाहिए।

मृत्युंजय के द्वार पर बीजगुप्त का रथ पहुँचा। विवाह का प्रस्ताव लेकर आने की बात बीजगुप्त से सुनकर उसे प्रसन्नता हुई। पर दूसरे ही क्षण बीजगुप्त ने कहा 'आर्य मृत्युंजय, मैं अपने संबंध में कुछ नहीं कहना

चाहता। मैं अपने संबंध में पहले ही कह चुका हूँ। मैं यह प्रस्ताव लेकर उपस्थित हुआ हूँ कि आप अपनी कन्या का विवाह श्वेतांक से कर दें। श्वेतांक कुलीन है, सुंदर है, सभ्य तथा शिक्षित है। वह वास्तव में आपकी कन्या के लिए योग्य वर होगा - शायद मुझसे भी योग्य।' [41] इस बात पर मृत्युंजय चकित रह गए। कुछ देर तक मौन रह कर उन्होंने कहा, 'आर्य बीजगुप्त। श्वेतांक योग्य है; पर श्वेतांक संपन्न पिता का पुत्र नहीं है, वह निर्धन है। ऐसी अवस्था में मैं श्वेतांक के संबंध में प्रस्ताव पर विचार तक करने में असमर्थ हूँ।' [42] श्वेतांक निर्धन होने के कारण मृत्युंजय विवाह कराने के लिए तैयार नहीं है। उसी प्रकार जब मृत्युंजय कहते हैं, मेरी संपत्ति पर मेरी कन्या का नहीं बल्कि दत्तक पुत्र का अधिकार है। तभी बीजगुप्त तुरंत कहते हैं कि 'आर्य मृत्युंजय, मैं श्वेतांक को अपना दत्तक पुत्र बना रहा हूँ। इस प्रकार वह मेरी संपत्ति का अधिकारी होगा। ऐसी स्थिति में तो आपको कोई आपत्ति न होनी चाहिए।' [43] इस बात को मृत्युंजय असमर्थ बताते हैं, मृत्युंजय उससे भविष्य के बारे में कहते हैं - 'अगर तुम्हारी शादी हो गई तो तुम्हारा पुत्र ही इस संपत्ति का उत्तराधिकारी बनेगा।' परंतु बीजगुप्त इसपर अपना प्रामाणिक विचार बताता है, 'आप ठीक कहते हैं आर्य मृत्युंजय। यद्‌यपि मैं इस समय विवाह न करने पर तुला हुआ हूँ, फिर भी मनुष्य की मति का क्या ठिकाना। पर मैं चाहता हूँ कि श्वेतांक का और यशोधरा का विवाह हो जाए। इस विवाह से दोनों सुखी होंगे। इसके लिए मैं बड़ा से बड़ा त्याग करने को प्रस्तुत हूँ। आर्य मृत्युंजय, मैं अपनी सारी संपत्ति श्वेतांक को दान दूँगा।' [44] मृत्युंजय को ऐसी बातों पर बीजगुप्त का पागलपन लगता है। वह मानते हैं कि बीजगुप्त को यह पता नहीं की वह क्या कह रहे हैं। मृत्युंजय के इन शब्दों के बाद, बीजगुप्त ने एक-एक शब्द पर जोर देते हुए कहा - 'आर्य मृत्युंजय। मैं जो कुछ कह चुका हूँ, करूँगा। मैं मनुष्य हूँ - बात से फिरना मैं नहीं जानता' [45] उसके बाद मृत्युंजय इन दोनों के विवाह को स्वीकृती देते हैं। बीजगुप्त वहाँ से जाता है दान पत्र तैयार करने के लिए और पदवी के लिए राज्याज्ञा का प्रबंध करने के लिए। जाते-जाते वह मृत्युंजय से कह जाते हैं कि विवाह की तिथि आप निश्चित कर लें। बीजगुप्त का यह बर्ताव देखकर मृत्युंजय कह उठते हैं कि - 'आर्य बीजगुप्त। मैंने संसार को देखा है। मैं कहता हूँ, आप मनुष्य नहीं है, देवता है।' [46] इतना कहने के बाद उनके आँखों में आँसू भर आए।

बीजगुप्त अपने भवन में आया उसने देखा श्वेतांक सो रहा है। उसके नेत्र भी अश्रु से भीगे थे। उसे उठाया। बीजगुप्त ने श्वेतांक से कहा श्वेतांक अब तुम मुझे स्वामी नहीं कहना तुम ही सामंत बन गए हो। श्वेतांक को कुछ समझ में नहीं आता, श्वेतांक ने कहा - 'यह आप क्या कह रहे हैं।' इसपर बीजगुप्त कहते हैं - 'मैं जो कुछ कह रहा हूँ वह ठीक है। सुनो, मैंने अपनी संपत्ति तथा पदवी का दान उनके सामने तुम्हें कर दिया। अब उनको यशोधरा का तुम्हारे साथ विवाह करने में कोई आपत्ति नहीं है।' [47] श्वेतांक स्वयं को अपराधी मानता है उसे लगा बीजगुप्त की यह स्थिति उसीके कारण हो गई है वह रोने लगता है उसे बहुत दुःख होता है। और वह कहने लगा कि - 'नहीं। नहीं। स्वामी, मुझे यह स्वीकार नहीं, मैं कितना पापी हूँ - स्वामी, मुझे यह स्वीकार नहीं, मैं कितना पापी हूँ - स्वामी, मुझे क्षमा करो .... मैं जाता हूँ, मुझे क्षमा करो। मैंने आपके जीवन को नष्ट किया है - आप मुझ नराधम पर यह दया क्यों कर रहे हैं - मुझे स्वीकार नहीं है।' [48] वह बीजगुप्त के चरणों पर गिर पड़ा। बीजगुप्त के बारे में श्वेतांक की आदर भावना दिखाई देती है।

बीजगुप्त ने श्वेतांक को उठाया - 'श्वेतांक। जो कुछ होना था, वह हो चुका। अब यदि तुम्हारे हृदय में मेरे प्रति कुछ भी स्नेह है, तो जो कुछ मैं कर रहा हूँ, स्वीकार करो। संसार के सामने मुझे झूठा न बनने दो। मैंने इस वैभव को काफी भोगा है - अब चित्त फिर गया है। इस वैभव को तुम भोगो। मैं तुमसे प्रार्थना करता हूँ, तुम अस्वीकार न करो। चलो, दान-पत्र तथा पदवी के लिए राज्याज्ञा का प्रबंध करना है।' [49]

चित्रलेखा कुमारगिरि के यहाँ से लौटकर वापस आती है। उसे अपने आप पर घृणा आती है। और बीजगुप्त के प्रति अपने आप को अपराधिनी मानती है। वह पश्चाताप की अग्नि में जल रही थी। वह अब भ्रष्ट भी हो चुकी थी। कुमारगिरि के पागलपन और मूर्खता के एक छोटे-से क्षण में आत्मसमर्पण कर अब वह पछता रही थी, रो रही थी। आँसुओं की अनवरत धारा में वह उन दुर्भाग्यपूर्ण क्षणों की कालिमा धो डालना चाहती थी। श्वेतांक चित्रलेखा को बीजगुप्त के त्याग की कथा बता देता है। चित्रलेखा श्वेतांक को अपना छोटा भाई मानती है। लेकिन विवाह में आने की असमर्थता प्रकट करती है। चाहते हुए भी बीजगुप्त से मिलने की उसे हिम्मत नहीं हो रही थी। बीजगुप्त के प्रति वह अपराधिनी थी।

एक मास बीत गया। एक दिन श्वेतांक उससे मिलने और अपने विवाह का निमंत्रण देने आया। चित्रलेखा को उसने बीजगुप्त के सर्वस्वत्याग की और उसी कारण यशोधरा के साथ विवाह तय होने की बात कही। उसने यह भी कहा कि उसके विवाहोपरांत सोमवार की रात्रि में ही वे पाटलिपुत्र छोड़कर चले जाएँगे। चित्रलेखा सुनकर सन्न रह गई। श्वेतांक का विवाह हो गया। उसे सामंत कहकर पुकारा गया। प्रीतिभोज में सम्राट चंद्रगुप्त ने बीजगुप्त के महान त्याग की भूरी-भूरी प्रशंसा की। बीजगुप्त को उन्होंने महान आत्मा और देवता कहकर उसकी प्रशंसा की और उसके सामने सम्राट ने अपना मस्तक झुकाया। सभी उपस्थितों ने भी अपना-अपना माथा नत किया। बीजगुप्त ने हँसते-हँसते सबसे विदा ली। भिखारी के रूप में वह देश पर्यटन के लिए निकल पड़ा।

अर्धरात्रि का समय था। बीजगुप्त को किसी के पाँवों की आहट सुनाई दी। 'मेरे देवता। मेरे देवता। मुझे क्षमा करो।' [50] कहते हुए चित्रलेखा बीजगुप्त के चरणों पर गिर पड़ी। बीजगुप्त कर्कश स्वर में कहता है - 'चित्रलेखा? मेरे जीवन की अभिशाप - तुम यहाँ क्यों आई - जाओ। जाओ।' वह पीछे हट गया, 'अब सब समाप्त हो चुका - तुम क्यों आई हो?' फिर चित्रलेखा ने कहा 'अपने देवता की चरण-रज लेने। अपने देवता की पूजा करने के लिए।' चित्रलेखा खड़ी हो गई - 'नाथ। मैंने तुम्हारा जीवन नष्ट कर दिया, मैंने तुम्हें मिटा दिया; तुम मुझे शाप दो, दंड दो, मुझे ताड़ित करो - पर मुझसे घृणा न करो।' [51] बीजगुप्त ने कहा - 'मेरे पास अब कुछ नहीं। न हृदय में उमंग है, न पास में वैभव। जाने दो मुझे।' [52] चित्रलेखा ने उसका हाथ पकड़ लिया और कहा - 'एक दिन तुम्हें मेरे घर में अतिथि बनकर रहना होगा। यदि जाना है, तो कल चले जाना। क्या तुम्हारे हृदय में मेरे प्रति प्रेम मर गया?' वह फिर रोने लगी। बीजगुप्त उसे क्षमा कर देता है। उसके साथ भवन चला गया। बीजगुप्त को शयन करने के लिए कहकर चित्रलेखा प्रातःकाल मिलूँगी ऐसा कहकर दूसरे कमरे में चली गई।

दूसरे दिन प्रातःकाल वह बीजगुप्त के पास चरणामृत माँगने लगी। बीजगुप्त ने कारण पूछा तो उसने बताया कि, वह कुमारगिरि की वासना का शिकार बन चुकी है अतः बीजगुप्त के चरणामृत से वह अपने शरीर को पवित्र बनाना चाहती है। उसने यह भी बताया कि इसी कारण वह बीजगुप्त के पास नहीं आ सकी। बीजगुप्त ने यह सब सुनने के बाद कहा - 'तुमने बहुत बड़ी भूल की। तुमने मुझे समझने में भ्रम किया। तुम मुझसे क्षमा माँगती हो? चित्रलेखा, प्रेम स्वयं एक त्याग है, विस्मृति है, तन्मयता है। प्रेम के प्रांगण में कोई अपराध ही नहीं होता, फिर क्षमा कैसी। फिर भी यदि तुम कहलाना ही चाहती हो, तो मैं कहे देता हूँ - मैं तुम्हें क्षमा करता हूँ।' [53]

चित्रलेखा ने अपना स्वीकार करने का आग्रह किया। बीजगुप्त ने तब अपने को भिखारी बताकर अगर भिखारिन बनकर वह साथ चले तो स्वीकार करने की तैयारी दिखाई। चित्रलेखा ने भी अपना सारा वैभव त्याग दिया। रात के समय वे दोनों संसार के अथाह सागर में प्रेम की नौका पर बैठकर निकल पड़े। बीजगुप्त ने चित्रलेखा का चुंबन लेते हुए कहा - 'हम दोनों कितने सुखी है।' [54]

संसार में वे दो प्रेमी भिखारी बनकर निकल पड़े। प्रेम और केवल प्रेम उन दोनों का आधार था, सर्वस्व था।

उपसंहार में एक वर्ष बाद महाप्रभु रत्नांबर श्वेतांक से मिले और उन्होंने उससे पूछा - 'बीजगुप्त और कुमारगिरि में से कौन पापी है?' श्वेतांक ने बीजगुप्त को त्याग की प्रतिमूर्ति और देवता बताया। और सराहना की। कुमारगिरि के संबंध में उसने कहा कि वह स्वयं के लिए ही जीवित रहनेवाला पशु और पापी है।

विशालदेव से वही प्रश्न जब रत्नांबर ने पूछा तो उसने उत्तर दिया कि कुमारगिरि इंद्रियजीत योगी तथा ज्ञान और आत्मशक्ति का भंडार है और बीजगुप्त वासना का दास और पापी है।

महाप्रभु रत्नांबर इन दोनों की शंका का समाधान करते हुए कहते हैं कि तुम दोनों विभिन्न परिस्थितियों में रहे हो, इसी कारण पाप के विषय में तुम दोनों की भिन्न-भिन्न धारणाएँ हैं। 'संसार में पाप कुछ भी नहीं है, वह केवल मनुष्य के दृष्टिकोण की विषमता का दूसरा नाम है। प्रत्येक व्यक्ति एक विशेष प्रकार की मन: प्रवृत्ति लेकर उत्पन्न होता है .... प्रत्येक व्यक्ति इस संसार के रंगमंच पर एक अभिनय करने आता है अपनी मन: प्रवृत्ति से प्रेरित होकर अपने पाठ को वह दुहराता है .... यही मनुष्य का जीवन है। जो कुछ मनुष्य करता है वह उसके स्वभाव के अनुकूल होता और स्वभाव प्राकृतिक है। मनुष्य अपना स्वामी नहीं है, वह केवल साधन है। फिर पुण्य और पाप कैसा?' [55] 'इसीलिए संसार में पाप की एक परिभाषा नहीं हो सकी - और न हो सकती है। हम न पाप करते हैं और न पुण्य करते हैं, हम केवल वह करते हैं, जो हमें करना पड़ता है' [56] यह रत्नांबर का कहना है। वर्माजी ने रत्नांबर की सहायता लेकर अपना ही मत प्रकट किया है। यह रत्नांबर के अंतिम कथन से स्पष्ट होता है। रत्नांबर उठ खड़े हुए - 'यह मेरा मत है - तुम लोग इससे सहमत हो या न हो, मैं तुम्हें बाध्य नहीं करता और न कर सकता हूँ। जाओ तुम सुखी रहो। यह मेरा तुम्हें आशीर्वाद है।' [57]

संक्षेप में समयमूलक उपन्यास 'चित्रलेखा' की यही संक्षिप्त कथा है। इसमें अनेक घटनाएँ हैं। अधिकाधिक घटनाएँ चित्रलेखा से संबंधित हैं और प्रासंगिक घटनाएँ इनका कुशलता से संयोजन किया है। इसमें प्रमुख पात्र तीन है - चित्रलेखा, बीजगुप्त और कुमारगिरि, और गौण पात्र है - श्वेतांक, विशालदेव, मृत्युंजय, यशोधरा, महाप्रभु रत्नांबर, चंद्रगुप्त और चाणक्य। इन सभी का चरित्र-चित्रण कुशलता से किया है। यह उपन्यास पूरी तरह से सफल उपन्यास है।

निष्कर्ष

भगवतीचरण वर्माजी का चित्रलेखा समस्या-मूलक उपन्यास है। वर्माजी ने कथा का आरंभ विकास एवं अंत सभी पहले से ही निश्चित करके कथा लिखी है। इसमें शुष्कता या नीरसता कहीं नहीं है। समस्या के अनुरूप घटनाएँ चित्रित की गई हैं। उपन्यास में अनावश्यक घटनाएँ नहीं हैं। कथा में महाप्रभु रत्नांबर द्वारा ही लेखक ने श्वेतांक और विशालदेव को निर्मित कर उनके बहाने कथा को दो धाराओं में विभाजित कर दिया है। इन दोनों कथाओं का केंद्र बीजगुप्त और कुमारगिरि है।

इस उपन्यास में प्रारंभ में परिस्थितियों का परिचय दिया है। फिर उनका संघर्ष दिखाया है। मध्य भाग में यशोधरा की प्रासंगिक कथा द्वारा कथानक में विस्तार होता है। अंत में कथा का उतार दिखाया है, जो बहुत तीव्र है। केवल एक ही वर्ष का संक्षिप्त ऐसा कथानक है। प्रारंभ अत्यंत नाटकीय हो गया है।

13618

इस उपन्यास को कथा-शिल्प दृष्टि से भी हिंदी उपन्यास जगत में एक 'लैन्ड-मार्क' माना जा सकता है। इसमें स्थान, काल और कार्य की एकता अपूर्व ढंग से समन्वित मिलती है, जो उपन्यास का एक बड़ा गुण माना जा सकता है। पाटलिपुत्र ही 'चित्रलेखा' के संपूर्ण कथानक की प्रधान घटनाओं की रंगस्थली है। इससे स्थान का बोध होता है। एक वर्ष के समय में ही संपूर्ण कथा का प्रसार सीमित है। इससे काल का बोध होता है। और पाप का पता लगाना ही उपन्यास का प्रधान कार्य है। जिसमें लेखक को अद्‌भुत सफलता मिली है। कथावस्तु का संयोजन, संतुलन देखने योग्य एवं प्रशंसनीय है।

	संदर्भ	पृष्ठ
1.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	5
2.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	6-7
3.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	12
4.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	13
5.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	16
6.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	18
7.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	28
8.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	29
9.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	29-30
10.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	32
11.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	33
12.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	34
13.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	44
14.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	46
15.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	52
16.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	55
17.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	57
18.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	60
19.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	64
20.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	65
21.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	73
22.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	74
23.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	77
24.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	78
25.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	85
26.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	87-88
27.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	89

		पृष्ठ
28.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	105
29.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	106
30.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	128
31.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	131
32.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	135
33.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	153
34.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	155
35.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	156
36.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	156
37.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	158
38.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	159-160
39.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	163
40.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	163
41.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	165-166
42.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	166
43.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	166
44.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	167
45.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	167
46.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	167
47.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	168
48.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	168
49.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	168
50.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	173
51.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	173
52.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	173
53.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	175
54.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	175
55.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	177
56.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	177
57.	चित्रलेखा - भगवतीचरण वर्मा	177